IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 7, June 2026
Impact Factor: 8.2

वैशाली की नगरवधू में नारी भोग का साधन : अतीत से वर्तमान तक

श्री वसंत दादू कांबळे
मु / पो कोळिंद्रे तह- आजरा जिला कोल्हापुर
vasantdadukamble@gmail.com

सारांश : *नारी विमर्श हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण चिंतनधारा के रूप में विकसित विषय है। यह स्त्री की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक स्थिति का विश्लेषण करके, स्त्री के अधिकार, स्वतंत्रता एवं उसके शोषण आदि समस्याओं का अध्ययन करता है।*

हिंदी साहित्य की सभी विधाओं में नारी विमर्श एक सशक्त और जीवंत धारा के रूप में विकसित हुआ है। आज के युग में उपन्यास विधा को महाकाव्य के रूप में जाना जाता है। इस दृष्टिसे आचार्य चतुरसेन शास्त्री का प्रसिद्ध ऐतिहासिक कालजयी उपन्यास "वैशाली की नगरवधू" में आर्य सभ्यता का ह्रास और बौद्ध एवं जैन सभ्यता का अभ्युदय के समय की नींव को पकड़कर ढ़ाई हजार साल पूर्व परिस्थिति का चित्रण किया है।

आर्य सभ्यता का खोखलापन और गणतंत्र प्रणाली के शुरुआती चरण के विकृत स्वरूप की जानकारी इस उपन्यास से उपलब्ध होती है। इस उपन्यास में नगर की सबसे सुंदर और प्रतिभाशाली स्त्री को नगरवधू के रूप में घोषित करने की परंपरा का वर्णन किया है। समाज की नारी देह को उपभोग्य साधन के रूप में देखने की मानसिकता दिखायी देती है। स्त्री जीवन की पीड़ा, समाज द्वारा उस पर लगाए गए बंधन और उसकी अस्मिता का गहन चित्रण इस उपन्यास में मिलता है। नारी विमर्श की दृष्टि से यह रचना स्त्री की स्थिति, संघर्ष और आत्मसम्मान को समझने का महत्वपूर्ण माध्यम बनती है।

कुंजी शब्द : स्त्री, विमर्श, नगरवधू, भोग, शोषण, संघर्ष आत्मसम्मान

प्रस्तावना:

साहित्य सामाजिक भाव भावनाओं तथा असंतोष की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम रहा है। साहित्य और विमर्श (Discourse) का संबंध अत्यंत गहरा है। साहित्य समाज का यथार्थवादी चित्रण करता है, और विमर्श उस यथार्थवादी साहित्य का बौद्धिक दृष्टिकोण और समीक्षात्मक विश्लेषण कर के वैचारिक गहराई प्रदान करता है। विमर्श जैसे की स्त्री, दलित, आदिवासी, किसान, वृद्ध आदि अनेक विमर्श पाए जाते हैं।

I. नारी विमर्श

नारी विमर्श के द्वारा समाज में स्त्री की स्थिति को समझने और सुधारने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है। यह स्त्री को समान अधिकार, सम्मान और स्वतंत्रता दिलाने की दिशा में कार्य करता है। इसका विवेचन करते हुए मृणाल पांडेजी लिखती हैं कि "नारीवादी कत्तई स्त्रियों को बृहत्तर समाज से अलग-अलग रखकर देखने और हरक्षेत्र में पुरुषों के खिलाफ उन्हें प्रोत्साहित करने का दर्शन नहीं। यह तो एक समग्र दृष्टिकोण है, जो संवेदनशील नागरिकों में पहले शोषित एवं प्रवंचित स्त्रियों की स्थिति के प्रति सहानुभूति और मानवीय दृष्टिकोण विकसित करके उसके उजास में उन्हें अपने पूरे समाज के शोषित और प्रवंचित तबकों को समझने की क्षमता देता है" ।1 नारी परिवार से लेकर समाज और राष्ट्र निर्माण में अनिवार्य भूमिका निभाती है। वह ममता, सहनशीलता और त्याग की प्रतिमूर्ति है। वह अपने अधिकारों और सम्मान की चाह रखती है। लेकिन पुरुष प्रधान संस्कृति नारी को उपभोग का साधन मानती आयी है, इस बारे में राजेंद्र यादव लिखते हैं कि स्त्री अपनी बौद्धिक या अन्य उपलब्धियों के लिए हाय-तौबा मचाती रहे, पुरुष की जिद है की साम, दाम, दण्ड, भेद से वह उसे कमर, कूल्हे, नितंब छातियों से उपर नही उठने देगा" ।2 पुरुष प्रधान समाज नारी देह को अपने विलास का साधन मानता आया है। नारी की कमजोरी का लाभ उठाने वाले दरिंदे पुरुषों की कोई कमी नहीं है। विश्व के

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 7, June 2026 Impact Factor: 8.2

किसी भी कोने की नारी आजकल सुरक्षित नहीं है। इसका ज्वलंत उदाहरण एपस्टीन फाइलों द्वारा नारियों का यौन शोषण, मानव तस्करी सुर्खियों में बटोरी जा रही है। नारी का यौन शोषण सदियों से होता आ रहा है, उसे दासी बनाना, वेश्या बनाना, बेचना यह व्यापार प्राचीन काल से ही शुरू है, इस बारे में आचार्य चतुरसेन शास्त्री लिखते हैं कि, "बेटी है? कही से उड़ा तो नहीं लाए हो? यहां वैशाली में ऐसी सुन्दर लड़कियों के खुब दाम उठते हैं। कहो बेचोगे?"3 इस तरह प्राचीन काल से नारी को बेचना उसकी तस्करी करना ऐसे अवैध धंदे आज भी जारी है। नारी कितनी भी उन्नति करें, चांद, तारों पर जाएं लेकिन उसे जहन्नुम में पहुंचाने का पुरा इंतजाम पुरुष प्रधान संस्कृति करती आयी है।

II. वैशाली की नगरवधू' उपन्यास का परिचय

आचार्य चतुरसेन शास्त्री का ऐतिहासिक उपन्यास 'वैशाली की नगरवधू' (1948) प्राचीन भारत (बुद्ध काल) के वैशाली गणतंत्र की पृष्ठभूमि पर रचित है, इस उपन्यास से प्राचीन भारतीय आर्य संस्कृति की असभ्यता से परिचित होने को मिलता है, जो खुद को सर्व श्रेष्ठ समझने वाले आर्यों के बौद्धिक दिवालियापन, काले करतूतों और कुप्रथाओं को जन्म देनेवाले अहंकारी आर्यों के करतूत से अवगत करवाया है। आर्यों के बारे में अपना मंतव्य प्रकट करते हुए आचार्य लिखते हैं कि "आर्यों के धर्म साहित्य राजसत्ता और संस्कृति की पराजय और मिश्रित जातियों की प्रगतिशील संस्कृति की विजय सहस्त्राब्दियों से छिपी हुई है, जिसे सम्भवतः किसी इतिहासकार ने आंख उखाड़कर देखा नहीं है" ।4 शास्त्रीजीने आर्यों की विचारधारा और विकृत मानसिकता को इस उपन्यास द्वारा स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इस उपन्यास में आर्य, जैन, बौद्ध, हिंदू संस्कृति पाई जाती है। इस लिए आचार्य वाचकों समीक्षकों की राय मांगते हुए लिखते हैं कि " मैं केवल आपसे यह एक अनुरोध करता हूं कि इस रचना को पढ़ते समय उपन्यास के कथानक से पृथक् किसी निगूढ़ तत्व को ढूंढ निकालने से आप सजग रहे। संभव है, आपको वह सत्य मिल जाए" ।5 इस उपन्यास द्वारा आर्यों की विकृत मानसिकता को स्पष्ट करने के एकमात्र उद्देश्य से इस रचना का सृजन आचार्यजी ने किया था। इस मंतव्य से स्पष्ट होता है।

III. प्राचीन भारतीय गणराज्य प्रणाली

उपन्यास में प्राचीन लिच्छवियों के वज्जी संघ की राजधानी वैशाली की विशालता और समृद्धता का बोध होता है। विदेह राज्य टूटकर यह वज्जी संघ बना था। लिच्छवियों का यह गणराज्य प्राचीन भारतीय मगध साम्राज्य के लिए काँटा बन गया था इस बारे मैं आचार्य लिखते हैं कि "अष्टकुल के संयुक्त लिच्छवियों का यह संघव्रात्य संकरों का संघ था और इनका यह गणतंत्र पूर्वी भारत में तब एकमात्र आदर्श और सामर्थ्यवान संघ था, जो प्रताप मगध साम्राज्य की उस समय की सबसे बड़ी राजनीतिक और सामरिक बाधा थी" ।6 इस राज्य में आधुनिक लोकतंत्र प्रणाली की तरह संघ का शासन राज परिषद द्वारा संचालित किया जाता था। और प्रत्येक सातवें वर्ष चुनाव होते थे। यहां के राज्य व्यवस्था (कानून) का पालन करना हर एक को अनिवार्य था।

IV. वैशाली की परंपरा (कानून) नगरवधू बनाना

वैशाली के परंपरा (कानून) अनुसार सुंदर और प्रतिभाशाली स्त्री को नगर वधू घोषित किया जाता था, उसे पूरे नगर की संपत्ति माना जाता था। यह व्यवस्था बाहरी रूप से सम्मानजनक प्रतीत होती थी, परंतु वास्तव में यह स्त्री के व्यक्तिगत अधिकारों का हनन था। उसे अपनी इच्छानुसार जीवन जीने की स्वतंत्रता नहीं थी। इस प्रकार उस समय स्त्री को समाज की इच्छाओं के अनुसार जीवन बिताना पड़ता था। इस घृणास्पद परंपरा के बारे में बताते हुए आचार्य लिखते हैं कि, "अब भन्तेगण सुने, भन्ते महानामन् आज आपकी पुत्री अम्बपाली अठारह वर्ष की आयु पूरी कर चुकी। वैशाली जनपद में उसे सर्वश्रेष्ठ सुंदरी निर्णीत किया है। इसलिए वज्जी गणतंत्र के कानून अनुसार उसे यह परिषद 'वैशाली की नगरवधू घोषित किया चाहती है और आज उसे 'वैशाली की जनपद कल्याणी' का पद देना चाहती है" ।7 यह परंपरा सम्मान के नाम पर नारी का शोषण और पुरुषप्रधान संस्कृति के लिए मनोरंजन का साधन बन गई थी। इससे नारी को पूरे जनपद (राज्य) के सुख-भोग का साधन बनाकर पुरुषप्रधान समाज की विकृत मानसिकता नजर आती है। आज के युग में भी नारी को मनोरंजन और भोग का साधन के रूप में देखा जाता है। उस युग में परंपरा (कानून) द्वारा सुंदर और विदुषी नारी को मनोरंजन और भोग का साधन बनना पड़ा आज के युग में नारी की मजबूरी और परिस्थिति उसे भोग और मनोरंजन का साधन बनाती है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 7, June 2026
Impact Factor: 8.2

गलत परंपराओं को पालन करने के लिए मजबूर कर देने वाले उस युग के कानून के खोखलापन को दर्शाते हुए आचार्य लिखते हैं कि " भन्ते गण आज अम्बपाली अठारह वर्ष की आयु पूरी कर चुकी। वज्जी संघ के कानून के अनुसार अब वह स्वाधीन है और अपने प्रत्येक स्वार्थ के लिए उत्तरदात्री है। अतः आज से मैं इसका अभिभावक नहीं हूं।8 इस तरह कानून के दो रूपों को दर्शाया है, जिसमें एक गलत परंपराओं का पालन करने के लिए मजबूर करना और दूसरी तरफ अठारह वर्ष बीत जाने पर निर्णय लेने की सक्षमता की बात करना।

नारी के इच्छा का कोई मूल्य नहीं है। उसकी मर्जी के खिलाफ उसे जीवन जीने के लिए मजबूर किया जाता है। अम्बपाली को भी न चाहते हुए उसे मजबूरन वज्जी संघ के कानून को स्वीकार करना पडता है। "मैं वज्जी संघ के धिक्कृत कानून को स्वीकार करती हूं" ।9 नारी मन को समाज में कोई मूल्य नहीं है। उसे पुरुषों की हां में हां मिलाकर जीवन जीने के लिए मजबूर किया जाता है। समाज स्त्री को केवल उसके सौंदर्य और आकर्षण के आधार पर मूल्यांकित करता है। अम्बपाली की सुंदरता ही उसे नगरवधू बनने के लिए बाध्य करती है। इस परंपरा के अंतर्गत नगरवधू को समाज में सम्मान, धन और प्रतिष्ठा प्राप्त होती थी। उसे नृत्य, संगीत और कला में दक्ष बनाया जाता था। वह सार्वजनिक समारोहों का केंद्र होती थी। परंतु इस व्यवस्था का वास्तविक पक्ष यह था कि नगरवधू का जीवन उसका अपना नहीं रह जाता था। वह किसी की पत्नी नहीं बन सकती थी।

अम्बपाली सिर्फ सुंदर ही नहीं थी वह एक विदुषी नारी थी। उसकी विवशता उसे नगरवधू बनने पर मजबूर कर देती है लेकिन उसकी बुद्धीमता स्वाभिमान उसे अन्याय के विरोध में खड़ा कर देता है। इस बारे में अम्बपाली के विचार बताते हुए आचार्य लिखते हैं कि "अम्बपाली ने सहज शांत स्वर में कहा- 'मैं सहस्त्र बार शब्द को दुहराती हूं! वज्जीसंघ का यह धिक्कृत कानून वैशाली जनपद के यशस्वी गणतंत्र का कलंक है। भंते मेरा अपराध केवल यह ही है कि विधाता ने मुझे अथाह रूप दिया। इसी अपराध के लिए आज मैं अपने जीवन के गौरव को लांछना और अपमान के पंक में डुबो देने को विवश की जा रही हूं। इसी से मुझे स्त्रीत्व के उन सभी अधिकारों से वंचित किया जा रहा है जिन पर प्रत्येक कुलवधू का अधिकार है। अब मैं अपनी रुचि और पसंद से किसी व्यक्ति को प्रेम नहीं कर सकती, उसे अपनी देह और अपना हृदय अर्पण नहीं कर सकती। अपना स्नेह से भरा हृदय और रूप से लथपथ यह अधम देह लेकर अब मैं वैशाली की हाट में ऊंचे-नीचे दाम में इसे बेचने बैठूंगी। आप जिस कानून के बल पर मुझे ऐसा करने को विवश कर रहे हैं वह एक बार नहीं लाख बार धिक्कृत होने योग्य है" ।10 अम्बपाली का स्वाभिमानी एवं करारी स्वभाव अन्याय शोषण के विरोध में उठ गया है। आज भी पुरुष प्रधान समाज में नारी अनमेल विवाह, कुप्रथाओं की शिकार बन गई है। उसे उसके मर्जी से विवाह करने दिया नहीं जाता है। जातिप्रथा का पालन करने के लिए जाति- जाति में ही बाप, भाई द्वारा जबरदस्ती से उसका विवाह जाति की झूठी शान के लिए उसके मर्जी के बिना कर देते हैं। अगर लड़की ने माँ बाप और भाई के मर्जी के बीना शादी कर दी तो उसे घर से निकाल दिया जाता है, उसके साथ सभी रिश्ते तोड़ देते हैं। कभी-कभी उसे मार दिया जाता है। ऐसे अनेक निर्बंध नारी पर लादे जाते हैं। इससे नारी की असहायता स्पष्ट होती है।

अम्बपाली को नगरवधू बनाने का अर्थ होता है कि, उसकी इच्छा, आकांक्षा मन को त्याग देना। उसका शरीर एक यंत्रवत देह के समान सीमित कर दिया गया। बाजारू वस्तु के समान अपने देह को बेचना यही अर्थ निकलता है। विज्ञापन, फिल्म और मनोरंजन के क्षेत्र में आज भी स्त्री को आकर्षण और उपभोग की वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार उपन्यास में प्रस्तुत समस्या आज भी प्रासंगिक बनी हुई है।

V. स्वाभिमानी नायिका अम्बपाली

ब्राह्मण धर्म के उच्च निच्च, भेदभावपूर्ण व्यवहार, जाति- प्रथा, भोग-विलास, नारी शोषण आदी सामाजिक बंधनों से समाज उब चुका था। ऐसे माहौल में समाज सरल समतावादी मानवतावादी बौद्ध धम्म के प्रति आकृष्ट हो रहा था। इस धम्म में स्त्री-पुरुष- जाँत-पात ऐसा कोई भेदभाव नहीं था। वैशाली की नगरवधू अम्बपाली ब्राह्मणी धर्म सामाजिक शोषण, नारी शोषण से उब चुकी थी। उसे अपना भोग विलासपूर्ण जीवन असहाय लगने लगा। अम्बपाली नगरवधू के जीवन से उब गई थी, उस कारण उसने अपने आप को दस साल तक सप्तभूमि प्रासाद में बंद कर लिया था। जब वैशाली में बुद्ध का आगमन हुआ तब अम्बपाली ने अपनी व्यथा पीड़ा को बुद्ध के सामने प्रकट किया, "भन्ते भगवन इस अधम – अपवित्र नारी की विडंबना कैसे बखान की जाय! यह महानारी- शरीर कलंकित करके मैं जीवित रहने पर बाधित की गई, शुभ संकल्प से मैं वंचित रही। भगवन्, यह समस्त संपदा मेरी कलुषित तपश्चर्या का संचय है। मैं कितनी व्याकुल, कितनी कुंठित, कितनी शून्यहृदया रहकर अब तक जीवित रही हूं" ।11 अम्बपाली से बुद्ध की भेंट एक

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 7, June 2026 Impact Factor: 8.2

अत्यंत मार्मिक घटना है। सामाजिक भेदभावपूर्ण व्यवहार को चुनौती देकर नगरवधू को भी सम्मान और समतापूर्ण जीवन जीने का अधिकार है, यह इस भेंट से सूचित होता है। बुद्ध के सानिध्य से भोग विलासपूर्ण से भरे जीवन से मुक्ति पाकर उच्च आदर्शों पर चलने की शिक्षा मिलती है। नारी स्वतंत्रता और नारी स्वयं अपना मार्ग चुन सकती है। यह संदेश समाज में पहुंचता है।

VI. प्राचीन भारत में दास प्रथा

राजसत्ता, सामंत, नगरसेठ, सभी भोग विलास में अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे, भोग विलास उनके जीवन का अपरिहार्य अंग बन गया था। साम्राज्य लिप्सा और भोग लिप्सा यही उस समय के राजा महाराजाओं का जीवन बन चुका था। राजा, सामंत, नगर सेठ, युवा मदिरालय में ही अपनी ऊर्जा का होम हवन कर रहे थे। समाज में दास प्रथा प्रचलित थी। स्त्री-पुरुष वस्तुओं के समान बाजार में खरीदे जाते थे। दासों का जीवन बहुत निकृष्ट था। उनके टूटे फूटे झोपड़े, निकृष्ट आहार, बहुत ही हीन जीवन उनका था। भेड़-बकरियों की तरह दास, दासीं को बेचा जाता था। इस बारे में आचार्य लिखते हैं कि "अम्बपाली ने हंसकर कहा 'अब तुम गांधार के स्वतंत्र वातावरण का सुखस्वप्न भूल जाओ। वज्जी संघ को आत्मसात् करो जहां युवराज स्वर्णसेन जैसे लिच्छवि तरुण और आर्य आश्वलायन जैसे श्रोत्रिय ब्राह्मण रहते हैं, जिन्हें बड़े बने रहना ही होगा। इन्हें दास चाहिए, दासी चाहिए और भोग चाहिए।12 आर्यों के इस नगर में चले मनुष्य व्यापार से आर्यों के काले करतूतों की जानकारी और आदर्श विचारधारा का पर्दाफाश होता है। आज के सभ्य समाज में भी नारी-पुरुषों के व्यापार होते हैं। नारी देह विक्रय के लिए बाजार में सजे हुए दिखाई देते हैं।

राजा महाराजाओं और ब्राह्मणों का ऐयाशी भरा भोग विलास पूर्ण जीवन था। छल-कपट, बाहुबल से अनेक स्त्रियों का भोग लेकर उन्हीं दासी बनाया जाता था। राजा लोग अपनी भोग लिप्सा तृप्त होने के पश्चात उन्हें पंडितों को दान देते थे। पंडित इन्हें भोगकर, पशुवत उनके साथ व्यवहार करते थे। बाद में उन्हें बाजार में देह विक्रय के लिए बेच दिया जाता था। इस तरह नारकीय जीवन जीने पर मजबूर किया जाता था। ऐसी स्त्रियों से जन्मे बच्चों को अवैध संतान (नाजायज़ संतान) कहते थे। इन बच्चों को समाज में अपमानजन्य परिस्थिति का सामना करना पड़ता था। आज भी ऐसे नाजायज संतानों को समाज में सामाजिक पीड़ा को सहना पड़ता है। इन बच्चों के कारण गृहकलह भी बड़ते है। ऐसे सन्तानों को उनके अधिकारों से वंचित रखा जाता है। आगे जाकर यही संतान आर्य राजाओं के विनाश का कारण बने। कोसल नरेश प्रसेनजीत का दासी पुत्र विदुडभ अपना तिरस्कार व्यक्त करते हुए कहता है कि "हम सब दासीपुत्र वर्णसंकर बन्धु, जो आप कुलीन किंतु कदाचारी आर्यों से घृणा करते हैं, उसे सार्वजनिक बनाएंगे। हम आर्यों के समस्त अधिकार, समस्त राज्य, समस्त सत्ताएं छीन लेंगे" ।13 इस तरह आर्य राजाओं के विनाश का कारण अनार्य बन गए। आर्यों के समाज में राजा, ब्राह्मण एवं क्षत्रिय समाज का नेतृत्व करते थे। बाकी वर्ग दास के रूप में जाना जाता था। दासों की लड़कियों को राजा अपने महल में दासी बनाकर रख सकता था। उनका भोग ले सकता था। ब्राह्मण राजा के किसी भी अनैतिक कार्यों को सहयोग देकर राजा से सम्मान पुरस्कार प्राप्त करते थे। धर्म केवल उच्च वर्ण के लिए था, निम्न जाति को समाज में कोई स्थान नहीं था। इसका विवरण राजपुत्र विदुडभ और जीवक कौमारभृत्य के बातचीत से निम्न प्रकार मिलता है, " सो तो है ही; और जब तक मोटे बछड़ों का मांस खाने वाले और सुंदरी दासियों को दक्षिणा में लेने वाले ब्राह्मण रहेंगे, और रहेंगे उन्हें अभयदान देने वाले ये राजा लोग, तब तक ऐसा ही रहेगा, मित्र। ये तो स्वर्ण, दासी और मांस के लिए कोई भी ऐसा काम, जिससे इनके आश्रयदाता राजा और सामंत प्रसन्न हो, खुशी से करने को तैयार है" ।14 इस तरह समाज को मार्गदर्शन धर्म की शिक्षा देने वाले ब्राह्मण अपनी राह से भटक चुके थे। समाज में ब्राह्मण धर्म का वर्चस्व था। ब्राह्मण धर्म में नारी की स्थिति एक समान नहीं रही, बल्कि समय के साथ उसमें गिरावट आई। जहाँ प्रारंभिक काल में स्त्री को सम्मान और अधिकार प्राप्त थे, वहीं बाद के काल में उसे सामाजिक और धार्मिक बंधनों में जकड़ दिया गया। स्त्री की पवित्रता और मर्यादा पर अत्यधिक जोर दिया गया। उसके आचरण, वेशभूषा और स्वतंत्रता पर कठोर नियंत्रण स्थापित किए गए। विधवा स्त्रियों की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई। उन्हें समाज में सम्मान नहीं मिलता था, और कई प्रकार के सामाजिक प्रतिबंध झेलने पड़ते थे। इस नारी की स्थिति के लिए ब्राह्मण जिम्मेदार थे। इस मंतव्य के बारे में अपने विचार प्रकट करते हुए आचार्य चतुरसेन शास्त्री लिखते हैं कि, "ब्राह्मण इन सामंतों और राजाओं को परमपरमेश्वर घोषित करते, इन्हें ईश्वरावतार प्रमाणित करते और इनके बदले सब ऐश्वर्यों को पूर्वजन्म के सुकृतों का फल बताते थे। इसके बदले में वे बड़ी-बड़ी दक्षिणाएं फटकारते और स्वर्णभूषिता सुन्दरी दासियाँ दान में पाते थे" ।15 इस तरह अपने वैयक्तिक स्वार्थ के लिए ब्राह्मणों ने निचले वर्ग के लोगों और नारियों पर धर्म के नाम पर अन्याय किया।

ISSN: 2581-9429
Impact Factor: 8.2

VII. नारी का मूल्य वस्तु के समान

पुरुषों की मानसिकता उस युग में ऐसी थी कि, उनको नारी एक वस्तु के समान दिखाई देती थी। पुरुष अपने फायदे के लिए नारी के साथ कोई भी रिश्ता हो, उसका उपयोग कर लेने में रुचि रखते थे। वे अपने फायदे के लिए किसी भी स्तर पर जा सकते थे। आर्यो ने नारी को अपने भोग के लिए दासी बनाया। उनकी नजरों में नारी हाशिए पर रहने वाले शुद्रों के समान थी, उससे सिर्फ भोग लेना इसी उद्देश्य से उसके साथ रिश्ता तय होता था। इसी दृष्टिसे नारी को विषकन्या के रुप में भी निर्माण किया जाता था। उन्होंने अपनी खुद की बेटी को भी नहीं छोड़ा उसे भी वे विषकन्या बनाते थे। इस बारे में आचार्य चतुरसेन लिखते हैं कि "नहीं पिता, अब नहीं, मैं सहन न कर सकूंगी। आचार्य ने कठोर मुद्रा में उसकी ओर ज्वाला- नेत्रों से देखा- सावधान कुंडनी मुझे क्रुद्ध न कर। उन्होंने हाथ के चमड़े का एक चाबुक हिलाकर रुक्ष – हिंस्र भाव से कहा- दंश ले" ।16 इससे भला और क्या सामाजिक असंवेदनशील हो सकती है? खुद के बेटी को विषकन्या बनाने वाले बाप उस समाज में थे। आज के युग में चोरी करने के लिए देह विक्रय करने के लिए भीख मांगने के लिए मजबूर करने वाले बाप पाए जाते हैं। आज भी लड़कियों को पिता द्वारा बेचने के किस्से सुनने को मिलते हैं। यह बात नारी के प्रति सामाजिक असंवेदनशीलता को दर्शाती है।

VIII. नारी त्याग का प्रतीक

इस उपन्यास की नारी त्याग, बलिदान, करूणा, प्रेम वीरता एवं साहस की मूर्ति है। कलिंगसेना चंपा नरेश के बेटी थी। चंपा नरेश एक विलासी एवं कामुक पुरुष था। तो बेटी उसके विपरीत मर्यादाशील, मानवीय गुणों से संपन्न व्यवहारकुशल शिक्षित नारी थी। पिता के लिए अपने प्रेम को त्यागकर सत्तर बरस के बुढ़े से विवाह करने के लिए तैयार हो गई थी। उसने अपने प्रेम की बलि चढ़ा दी। इस बारे में आचार्य चतुरसेन लिखते हैं कि, "उसने अभी पति को नहीं देखा था, पर उसने सुना था कि विगलित- यौवन सत्तर वर्ष के बूढ़े, सनकी और स्त्रैण का पुरुष है। उसने इच्छापूर्वक ही कौशाम्बीपति उदयन को त्याग कर इस बूढ़े राजा से विवाह करने की स्वीकृति दे दी थी, परंतु उसका प्रिय भाव उदय उदयन को ही ओर था। प्रसेनजीत के प्रति उसके मन में पूरी विरक्त थी। महाराज के श्रावस्ती में लौटने पर उसका विवाह होगा, यह उसे मालूम था। उसकी तैयारियां भी वह देख रही थी और धैर्यपूर्वक बलि- पशु की भांति उसे दिन की प्रतीक्षा कर रही थी। उस तेजवती विदुषी स्त्री ने पिता के राजनीतिक स्वार्थ की रक्षा के लिए बलि दी थी" ।17 कुल की मर्यादा रक्षण करने के लिए आपना आत्मसमर्पण करने वाली नारी का रूप इस राजकन्या के माध्यम से दिखाई देती है। कर्तव्य परायण एवं आदर्श पतिव्रता का रूप नारी है। कोसल नरेश प्रसेनजीत की महिषी राणी अत्यंत गुणवान और रूपवान थी। हीन जाती की होते हुए भी उसके गुणों के कारण अंतःपुर में लायी गई थी। सृष्टि में स्त्री और पुरुष दोनों की रचना अलग-अलग होते हुए भी उन्हें एक दूसरे के पुरक बनाया है। पुरुषों का कार्यक्षेत्र, कर्मक्षेत्र शारीरिक बल, बुद्धिचातुर्य, बहुआयामिता है, वही नारी में मानसिक सौंदर्य, संस्कारशीलता, प्राणशक्ति, प्रेम कर्मक्षेत्र में सक्रियता के गुण दिखाई देते हैं। इन दोनों की समानता दिखाते हुए आचार्य चतुरसेन शास्त्री लिखते हैं कि, "पुरुष हिरण्य गर्भ है, नारी विराट प्रकृति है, पुरुष स्वर्ग है, नारी पृथ्वी है, पुरुष तब शक्ति का रूप है" ।18 इन दोनों के गुणों का मिलन ही जीवन है। जीवन घर परिवार रिश्तेदारों से बनता है। हमें एक दूसरे के पुरक बनाया है, इसलिए नारी में कमी है, उसे कमजोर, तुच्छ समझना यह मानसिकता बदलनी चाहिए। क्योंकि नारी ही हमें अस्तित्व प्रदान करती है।

IX. समन्वित निष्कर्ष:

नारी विमर्श भारतीय समाज में उपस्थित नारी की संवेदना का इतिहास प्रस्तुत करता है। वैशाली की नगरवधू में आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी ने नारी की प्रतिष्ठा को चोट पहुंचाने वाले प्रत्येक प्रवृत्ति को उजागर कर के उसमें उत्पन्न संवेदना को सभी समस्याओं का मूल माना है। समाज में प्रचलित अनिष्ट प्रथा द्वारा समाज का हनन होता है। जैसे कि दास प्रथा, नारी को नगरवधू बनाने कि प्राचीन परंपरा सामाजिक विकृति को दर्शाती है। उपन्यास की नायिका अम्बपाली संवेदना का मुख्य रूप है। अम्बपाली के चरित्र द्वारा प्राचीन ब्राह्मण धर्म और गणराज्य प्रणाली के खोखलापन को प्रस्तुत किया है। अम्बपाली का चरित्र नारी सुलभ मानवीयता का अधिकार चाहता है, और नारी अधिकार की अपेक्षा सहयोग की अपेक्षा ज्यादा चाहती है। अतीत में नारी भोग की वस्तु थी, वर्तमान में वह अपने अधिकारों और सम्मान के लिए संघर्षरत है। और भविष्य में पूर्ण समानता की दिशा में अग्रसर है। यह कृति बताती है

DOI: 10.48175/IJARSCT-37513

IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 7, June 2026 Impact Factor: 8.2

कि समाज का वास्तविक विकास तब संभव है, जब नारी को केवल सौंदर्य या भोग की वस्तु न मानकर एक स्वतंत्र, सम्मानित और निर्णय लेने वाले व्यक्तित्व के रूप में स्वीकार किया।

संदर्भस्त्रोत

1. परिधि पर स्त्री; मृणाल पांडे, राधाकृष्ण प्रकाशन; नई दिल्ली। पृ. 47
2. आदमी की निगाह में औरत; राजेंद्र यादव, राजकमल प्रकाशन; नई दिल्ली, पृ. 28
3. वैशाली की नगरवधू आचार्य चतुरसेन शास्त्री राजपाल प्रकाशन नई दिल्ली पृ.12
4. वही पृ. 6
5. वही पृ. 6
6. वही पृ. 7
7. वही पृ. 16
8. वही पृ. 16
9. वही पृ. 18
10. वही पृ. 18
11. वही पृ. 446
12. वही पृ.83
13. वही पृ.96
14. वही पृ.173
15. वही पृ.172
16. वही पृ.211
17. वही पृ.143
18. अदल बदल आचार्य चतुरसेन शास्री प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली पृ. 81